**ओ३म्**

**‘ऋषि दयानन्द की दो मुख्य देन सत्यार्थ प्रकाश और आर्यसमाज’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

**ऋषि दयानन्द महाभारतकाल के बाद उत्पन्न महापुरुषों में सत्यज्ञान व उसके प्रचार व प्रसार के कार्यों को करने वाले विश्व के सर्वोत्तम महापुरुष हैं। उनसे पूर्व इन कार्यों को करने वाला अन्य महापुरुष विश्व इतिहास में दृष्टिगोचर नहीं होता। महाभारत काल से पूर्व विश्व में सर्वत्र वेदों का प्रचार व प्रसार था, कहीं किसी मत, मजहब व पन्थ का अस्तित्व नहीं था, अतः महाभारत से पूर्व किसी महापुरुष, विद्वान व ऋषि-मुनि को वेद प्रचार का कार्य करने की ऐसी आवश्यकता नहीं पड़ी जैसी महर्षि दयानन्द को अनुभव हुई थी और उन्होंने उसे करके भी दिखाया। हमें लगता है कि महर्षि दयानन्द ने धार्मिक व सामाजिक दृष्टि से संसार को अविद्या व अज्ञान के अन्धकार से निकाला है।** हम यह भी अनुभव करते हैं कि आज का संसार धार्मिक क्षेत्र में अविद्या व पूर्वाग्रहों से युक्त है। कोई विद्वान व महापुरुष उसे विद्या व ज्ञान की कितनी भी अच्छी बातें बतायें, संसार का समस्त सद्ज्ञान उसके सम्मुख उपस्थित कर दें परन्तु आज के लोग अपवाद स्वरूप कुछ को छोड़कर, उसे स्वीकार नहीं करेंगे। इसका कारण है कि आज सबकी वा अधिकांश की आत्माओं पर अविद्या का घोर आवरण पड़ा है जिसमें अज्ञान व स्वार्थवश वह अपने हित को अहित और अहित को हित समझ कर अविद्या के कार्यों में प्रवृत्त रहते हैं। महर्षि दयानन्द ने भी संसार के सामने मनुष्य के वर्तमान व दूरगामी हितों की वेदों पर आधारित सत्य व ज्ञानयुक्त योजना प्रस्तुत की थी परन्तु स्वार्थ व अज्ञान के कारण मत-पन्थ-मजहब-सम्प्रदाय आदि के लोगों ने उस पर उचित रीति से विचार ही नहीं किया और अपनी अविद्याजन्य मान्यताओं में ही प्रवृत्त रहे। हमें भविष्य में भी इसकी आशा नहीं है कि मनुष्य वेदों व वैदिक ऋषि-मुनियों के ग्रन्थों में उपलब्ध सत्य धार्मिक व सामाजिक मान्यताओं को स्वीकार करेगा?

 जब हम ऋषि दयानन्द जी के जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो हम पाते हैं कि बाल्यकाल से ही उनमें असत्य व अविद्या के प्रति घोर उपेक्षाभाव था और सत्य को जानने व उसे प्राप्त कर उसका आचरण करने के प्रति उनमें अनुपम उत्साह व उसे स्वीकार करने की दृढ़ इच्छा शक्ति थी। इसी कारण वह अपने माता-पिता व पारिवारिक जनों का त्याग कर सत्य ज्ञान की खोज में निकले और अनेकानेक विपत्तियों व विपरीत परिस्थितियों में भी उन्होंने सत्य की खोज कर डाली। **वह इस संसार के सभी रहस्यों को जानने वाले अद्वितीय महापुरुष थे। सत्य को जानना व जनाना तथा असत्य को स्वयं छोड़ना व दूसरों से छुड़वाना ही उन्हें मनुष्य जीवन का उद्देश्य लगता था और इसे उन्होंने बहुत उत्तम तरीके से करके दिखाया।** विद्या प्राप्ति के लिए ऋषि दयानन्द ने लगभग समस्त देश का भ्रमण कर योगियों, विद्वानों व अनेक गुरुओं आदि की खोज की थी व उनसे विद्या प्राप्त की थी। सन् 1860 तक हम देखते हैं कि उनकी विद्या प्राप्ति की इच्छा पूर्ण नहीं हुई थी। अपने एक पूर्व गुरु की प्रेरणा से वह मथुरा में **प्रज्ञाचक्षु गुरु विरजानन्द जी** की कुटिया में आते हैं और उनसे लगभग 3 वर्षों तक वेद विषयक प्राचीन आर्ष व्याकरण एवं इसके अनेक ग्रन्थों का अध्ययन करते हैं। गुरु की सेवा में रहने के कारण गुरुजी से उन्हें अपने अनेक प्रश्नों व शंकाओं का समाधान करने का अवसर भी मिलता था। गुरु भी इस शिष्य को पाकर कृत्य-कृत्य हुए थे और उन्होंने दयानन्द जी से अनेक अपेक्षायें की थी जो विद्या की समाप्ति पर उन्होंने दयानन्द जी को बताई। उनकी अपेक्षा व प्रेरणा थी कि स्वामी दयानन्द देश व विश्व से अविद्या, अन्धविश्वास, अज्ञान, मिथ्या मान्यतायें, मिथ्या परम्परायें दूर कर ईश्वरीय ज्ञान वेद एवं ऋषि प्रणीत सत्य विद्याओं के ग्रन्थों व उनकी शिक्षाओं का प्रचार करें। **ऋषि दयानन्द ने अपने गुरु की इच्छा को शिरोधार्य कर वेद प्रचार को ही अपने भावी जीवन का मिशन बनाया था।** उनके भावी जीवन में हम उन्हें वेद प्रचार, मूर्तिपूजा व सभी अवैदिक मान्यताओं व परम्पराओं का वेद के प्रमाणों, तर्क व युक्तिपूर्वक खण्डन एवं सत्य व मानव हितकारी वैदिक मान्यताओं व परम्पराओं का मण्डन करते हुए देखते हैं जिसमें उनका नवम्बर, 1869 में काशी के 30 शीर्षस्थ पण्डितों व पौराणिक विद्वानों से किया गया प्रसिद्ध काशी शास्त्रार्थ भी सम्मिलित है जिसमें वह न केवल विजयी हुए थे अपितु उस दिन मूर्तिपूजा वेद विहित न होकर वेद विरुद्ध सिद्ध हुई थी।

 महर्षि दयानन्द द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार व मिथ्या मतों का खण्डन आदि का जो कार्य किया गया है उसे हम वेद प्रचार कह सकते हैं। वेद प्रचार का कार्य उन स्थानों पर, जहां वह एकदेशी सत्ता होने के कारण नहीं पहुंच पाते थे व उनके जीवनान्त पर उन विचारों व मान्यताओं का देश व विश्व में प्रचार होता रहे, इसके लिए उन्हें वाराणासी में अपने एक भक्त राजा जयकृष्ण दास से सुझाव मिलने पर उन्होंने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ की रचना की थी। आज यह ग्रन्थ विश्व में धार्मिक व सामाजिक सत्य मान्यताओं का प्रकाश करने वाले ग्रन्थों में शीर्षस्थ स्थान पर है। विगत 141 वर्षों में इसके हिन्दी में अनेक संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं और आज भी इसका देश व विश्व में प्रचार जारी है। इस सत्यार्थ प्रकाश ग्रन्थ के देश व विदेश की अनेक भाषाओं में अनुवाद भी हुए हैं जिससे संसार के लोग वेदों व ऋषि दयानन्द के विचारों व मान्यताओं से परिचित व सुशिक्षित हो सकते हैं। सत्यार्थप्रकाश में ऋषि दयानन्द जी ने जिन मान्यताओं को प्रस्तुत किया है, उन्हें प्रायः स्वीकार कर लिया गया है। कोई वैज्ञानिक एवं मत-पन्थ-मजहब-सम्प्रदाय का अनुयायी व आचार्य सत्यार्थप्रकाश की किसी मान्यता पर शंका व विरोघ नहीं करता है। **यह वेद और महर्षि दयानन्द सहित उनके सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ की दिग्विजय है।** यदि मनुष्य को अपने जीवन को सफल बनाना है तो उसे सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ का अध्ययन करना ही होगा व करना ही चाहिये। इसका अध्ययन कर वह मनुष्य जीवन व संसार के अनेक रहस्यों, अपने जीवन के उद्देश्य व उसके साधनों को जान सकेगा। उसके बाद वह साधना द्वारा ईश्वर का साक्षात्कार कर समस्त दुःखों से मुक्त होकर आनन्द की प्राप्ति करता है और वह जन्म-मरण के बन्धनों से छूट जाता है। अतः सत्यार्थप्रकाश की जो उपेक्षा करता है वह स्वयं की ऐसी हानि करता है जो अनेक जन्म-जम्नान्तरों में भी पूरी नहीं की जा सकती। **हम यह भी उल्लेख कर दें कि जिन लोगों ने सत्यार्थ प्रकाश पढ़़ा है उनमें से सभी ने संसार के सामने कोई अच्छा उदाहरण प्रस्तुत नहीं किया। वह भी प्रायः लोकैषणा, वित्तैषणा और पुत्रैषणा आदि प्रलोभनों से ग्रस्त हैं, इसलिए सत्यार्थप्रकाश का जो प्रभाव देश, समाज व विश्व पर पड़ना चाहिये था वह न हो सका। ऐसी स्थिति में भी इस सत्यार्थप्रकाश से संसार में आदर्श जीवन के धनी महानुभाव वा महापुरुष स्वामी श्रद्धानन्द, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम, महात्मा हंसराज, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, महात्मा नारायण स्वामी, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, डा. सत्यप्रकाश, स्वामी सत्यपति, पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, पं. युधिष्ठिर मीमांसक, पं. विश्वनाथ विद्यालंकार, डा. रामनाथ वेदालंकार आदि हो गये व हुए हैं और कुछ अब भी हैं जो वेदों के मार्ग पर चल कर अपना जीवन उन्नत व सफल कर रहे हैं।**

 सत्यार्थ प्रकाश की महत्ता के बाद अब आर्यसमाज के विषय में भी हमारे कुछ विचार प्रस्तुत हैं। ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना अपने मुम्बई के कुछ अनुयायियों की प्रेरणा से 10 अप्रैल, सन् 1875 को की थी। **आर्यसमाज का प्रमुख वा प्रधान उद्देश्य देश व विश्व में वेद प्रचार का कार्य करना व वैदिक मान्यताओं को संसार से मनवाना है। देश में तो यह कार्य प्रभावशाली रूप से हुआ है जिसका देश व समाज पर प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। अभी इस दिशा बहुत कार्य करना शेष भी है।** इस कार्य की सफलता में अनेक आर्य महापुरुषों ने अपना जीवन समर्पित हुआ है। आर्यसमाज ने देश में बड़ी संख्या में गुरुकुल व दयानन्द एंग्लो-वैदिक कालेज खोल कर शिक्षा व समाजोत्थान में अपूर्व क्रान्ति की है। इन कार्यों का ही परिणाम हुआ कि आज देश ज्ञान के क्षेत्र में विश्व में एक सन्तोषजनक स्थिति में खड़ा है। **सामाजिक बुराईयों को दूर करने के क्षेत्र में भी आर्यसमाज ने अपनी सर्वोपरि महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आर्यसमाज ने दलितोद्धार के अनेक कार्य किये हैं जिसका परिणाम यह हुआ कि भारतीय संविधान में भी छुआ-छूत व ऊंच-नीच के व्यवहार दण्डनीय बनाया गया है। आर्यसमाज ने दलित व आज की कथित पिछड़ी जातियों के लोगों को गुरुकुल में अध्ययन कराकर वेदों का विद्वान बनाया है जिसकी कि भारत के इतिहास में कोई मिसाल नहीं है। आर्यसमाज के ही कारण देश में भेदभाव कम हुआ है। आज भी इस दिशा में बहुत कुछ करना बाकी है।** देश में वोट बैंक की राजनीति ने आर्यसमाज के सामाजिक समरसता बनाने के कार्य को एक प्रकार से उलट कर उसे नष्ट करने का प्रयास किया है। आरक्षण भी आर्यसमाज के दलितोद्धार व समाजोत्थान के कार्य प्रतिगामी बना है। हमें लगता है कि जो लोग समाज को बांट कर देश में वोट-बैंक की राजनीति कर रहे हैं वह देश के हितैषी नहीं हैं। देश में पहले बाल विवाह, अनमेल विवाह व वृद्धों तक के विवाह होते थे। विधवा विवाह व वर्तमान की जातियों में अन्तर्जातीय विवाह अम्भव प्रायः था। आर्यसमाज ने इस स्थिति को अपने संगठित प्रचार से बदला है। आज समाज में बालविवाह, अनमेल विवाह आदि कम व बन्द हुए हैं और विधवा विवाह भी सामन्य रूप से होना आरम्भ हो गये हैं। ऋषि दयानन्द ने युवावस्था में विवाह करने का भी प्रचार किया था। उनके अनुसार विवाह की शास्त्र सम्मत न्यूनतम आयु कन्या की 16 वर्ष और युवक की 25 वर्ष है। इसको भी समाज ने स्वीकार कर लिया है। **ऋषि दयानन्द ने देश को स्वराज्य वा आजादी का विचार दिया। उन्होंने विदेशी राज्य का यह कह कर विरोध किया था कि विदेशी राजा हमारे देश में न हों और विदेशी हम पर राज्य न करें।** इतिहास के अनुसार देश की आजादी के आन्दोलन में लगभग 80 प्रतिशत लोग आर्यसमाजी वा आर्यसमाज की विचारधारा से प्रभावित होते थे। महर्षि दयानन्द के दो प्रमुख शिष्य हुए महादेव गोविन्द रानाडे और पं. श्यामजी कृष्ण वर्म्मा। गोपाल कृष्ण गोखले महादेव रानाडे के ही शिष्य थे। गांधी जी गोखले जी के शिष्य होने के कारण इस ऋषि दयानन्द-रानाडे-गोखले-गांधी परम्परा के कारण कुछ व अधिक ऋषि दयानन्द के विचारों से भी प्रभावित थे। इसी प्रकार क्रान्तिकारियों के आद्य गुरु वा आचार्य पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा थे जिन्हें महर्षि दयानन्द ने इंग्लैण्ड संस्कृत पढ़ाने के लिए भेजा था। वह ऋषि दयानन्द द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा, अजमेर के भी ऋषि दयानन्द द्वारा मनोनीत सदस्य थें। इस प्रकार आजादी की शान्ति व क्रान्ति दोनों धाराओं के आदि आचार्य स्वामी दयानन्द ही सिद्ध होते हैं।

 संमाज सुधार का ऐसा कोई कार्य नहीं जिसे आर्यसमाज ने अपने हाथों में न लिया हो। आवश्यकता होने पर आर्यसमाज ने पौराणिकों की मूर्तियों की रक्षा भी की है। गोरक्षा के कार्य में भी आर्यसमाज पौराणिक बन्धुओं के साथ रहा है। आज हिन्दी विश्व में लोक प्रिय है। इस का समस्त श्रेय भी ऋषि दयानन्द व आर्यसमाज को है। संस्कृत के प्रचार प्रसार और वैदिक धर्म विषयक उत्तमोत्तम साहित्य तैयार करने में भी आर्यसमाज में अपनी मुख्य भूमिका निभाई है। वेदों के आधार पर आर्यसमाज ने देश को यह विचार दिया है कि संसार में सभी मनुष्य समान हैं, कोई छोटा व बड़ा नहीं है तथा स्त्री व शूद्रों को भी वेदों के पढ़ाने व पढ़ाने का अधिकार है। आर्यसमाज द्वारा पूरे देश में यज्ञ आयोजित किए जाते हैं जहां अनेक यज्ञों में स्त्रियां यज्ञ की ब्रह्मा बनती हैं जो महाभारत काल के बाद व स्वामी दयानन्द से पूर्व सम्भव नहीं था। **अतः कोई माने या अज्ञानतावश और स्वार्थवश न माने, आर्यसमाज का देश के उत्थान में सर्वाधिक योगदान है।** हमने लेख में ऋषि दयानन्द के वेद प्रचार, सत्यार्थप्रकाश की रचना और आर्यसमाज की स्थापना की महत्ता विषयक कार्यों को संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया है। आशा है कि इससे पाठकों को किंचित लाभ होगा। इति।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**